रक्कू की कहानी

बीमारी की संरचनाएं और परिवर्तन के स्रोत

शीला ज़ूरब्रिग

अनुवाद : योगेंद्र दत्त

अभी पौ फटने में एक घंटा बचा था। उसका दूधमुंहा बच्चा शायद सपना देखते हुए उससे चिपट गया था। रक्कू* उसे थपका कर अंधेरे में ही जाग पड़ी और एक नए दिन की तैयारी के लिए चुपचाप खड़ी हो गई। मिट्टी और फूंस की छोटी-सी झोपड़ी के सामने बने संकरे बरामदे में उसका पति अभी भी सोया हुआ था। वह झोंपड़ी के पीछे अहाते में गई, उसने मुंह पर पानी के छींटे मारे और चूल्हे से थोड़ी-सी राख लेकर अपने दांत मांजने लगी।

मार्च के शुरुआती दिन थे। गर्मियों की आहट से दिन गर्म होने लगे थे। उंगली से अपने दांत घिसते हुए उसने आसमान की तरफ देखा जहां वृश्चिक तारा लगभग उसके ऊपर आ चुका था। तारों की स्थिति ने उसे इस बात का अहसास कराया कि जल्दी ही देवी मरियम्मन का पर्व आने वाला है। देवी मरियम्मन बहुत शक्तिशाली देवी है जो छोटे-छोटे बच्चों वाले घरों में खसरे के खौफनाक दाग छोड़ जाती है। इस खयाल के साथ ही उसे अपने ग्यारह महीने के बेटे का खयाल आ गया जो अभी कुछ पल पहले उसके शरीर से चिपका हुआ था। उसने गहरी सांस भरी और आसमान की तरफ देखते हुए संकल्प लिया कि इससे पहले की ये तारा दोबारा दिखाई दे, वह गांव के बाहर बने देवी के मंदिर में जाकर पूजा करेगी। उसने राख से अपने दांत साफ किए, फिर उसने अपने अस्त-व्यस्त काले बालों को सीधा करके सिर के पीछे जुड़ा बना दिया। हाथ में पानी का लोटा लेकर एक बार फिर वह उस कमरे में गई जहां उसका परिवार अभी भी सो रहा था। चलते हुए वह आगे के दरवाजे से बाहर निकल गई और झोंपड़ियों की तंग गलियों से गुजरते हुए वह पीछे बने खेतों में पहुंच गई। यहां सूखी झाड़ियों का एक मैदान था जिसमें महिलाएं शौच के लिए आती थीं।

कुछ मिनट बाद जब रक्कू वापस लौटी तो उसका सबसे छोटा बच्चा उनींदा सा कराह रहा था। उसने बच्चे को चटाई से उठाया और अपनी पीठ पर लगा लिया। पीठ पर से ही बच्चे ने अपनी मां की ढीली-सी कुर्ती में से उसके स्तन तक रास्ता बना लिया। अभी पौ फटने में और आधा घंटा है, रक्कू ने सोचा। इतनी देर में वह शाम के दलिये के लिए पर्याप्त मात्रा में रागी पीस लेगी और घर की साफ-सफाई कर देगी। फिर उसे गांव के दूसरे छोर पर कुएं से पानी लाना है। उसने अपनी पांच साल की बेटी पोन्नू को खींचा जो अभी भी गहरी नींद में सोई हुई थी। उसने बेटी को धीमी आवाज में डांट कर जल्दी-जल्दी हाथ-मुंह धोने को कहा। उसे चूल्हे-चौके के लिए कुछ टहनियां तोड़ कर लानी थीं।

उसकी पांच साल की बेटी अंधेरे से बाहर निकली और उसने मां के हाथ से पानी का लोटा ले लिया। बच्ची ने अपने चेहरे पर पानी छिड़का और मां की तरह राख से अपने दांत साफ किए। रक्कू ने मिट्टी की दीवार में बने एक आले से प्लास्टिक का कंघा निकाला और लड़की को अपनी गोद में बिठा लिया। वह अपनी बेटी के बालों की चोटी बनाने लगी। सलवटदार पीले रिब्बन से पोनू की चोटी बांधते हुए उसने समझाया कि कल उसने कहां राह किनारे सूखी टहनियां देखी थीं। वह रास्ता जमींदार परियास्वामी के खेतों की तरफ जाता था। बटी के बाल काढ़ने के बाद उसने फटाफट अपनी बेटी को कल रात का बचा दलिया गर्म करने के वास्ते टहनियां लाने को रवाना कर दिया।

उसने इमामदस्ते में रागी की आखिरी मुट्ठी डाली और आसमान की तरफ देखा। टोले के पिछली तरफ उजाला बढ़ने लगा था। रागी पीसना किसी भी औरत के लिए सबसे थकाऊ काम था। उसके लिए यह और भी मुश्किल हो गया था क्योंकि लकड़ी की भारी मूसली को चलाने के लिए अब उसकी सास जिंदा नहीं थी। उसकी सास कई साल पहले गुजर चुकी थी इसलिए अब ये काम केवल रक्कू की पीठ पर था जो मूसली के हर प्रहार के साथ नीचे को झुक जाती थी। उसका एक हाथ चारों तरफ बिखरते दानों को दोबारा खोल में धकेल देता था और दूसरा हाथ मूसली को चलाता था। उसको बूढ़ी औरतों की फुसफुसाहट भी याद आने लगी और शायद ये बात भी कि उनके हाथ बंटाने से कितना

सुभीता होता था। अकेले गाना इतना अच्छा नहीं लगता - हालांकि उसको मालूम था कि उसके गाने से बच्चों की आखिरी पहर की नींद में और सुकून भर जाएगा जैसे सालों पहले उसकी मां अपने बच्चों को गा-गा कर सुकून देती थी।

उसने पिसी हुई रागी को भिगोने के लिए रख दिया और मिट्टी व राख लेकर वह तांबे के मटके को धोने लगी। मटके को उठाते हुए उसके चेहरे पर हल्की-सी मुस्कान तैर गई। ये मटका उसका सबसे कीमती साधन था - ये उसे शादी के वक्त मायके से मिला था। फिर उसने मिट्टी का भी एक घड़ा उठाया और लंबी रस्सी से बंधी बाल्टी लेकर वह गांव के कुएं की तरफ चल पड़ी। पानी के लिए इकट्ठा होती औरतों की बढ़ती भीड़ के बारे में सोचते हुए उसके पैर अपने आप तेज चलने लगे। कुएं पर पहले ही कई औरतें अपनी बारी का इंतजार कर रही थीं। पानी के लिए अपनी बारी के इंतजार में धक्का-मुक्की करती औरतों का पारा पहले ही चढ़ने लगा था। उसने अपने चारों तरफ औरतों को देखा। उनमें से ज्यादातर बूढ़ी दादी-नानी थीं। उनकी उम्र ऐसी नहीं थी कि वे खेतों में मेहनत का काम कर सकें। कुछ लड़कियां भी थीं जिनमें से कुछ तो पोन्नू से बस एक-दो साल ही बड़ी थीं। उसने मन ही मन सोचा कि जब पोन्नू साल-दो साल में खुद पानी लाने के लायक हो जाएगी तो उसे कितना आराम मिलेगा। तब वह जमींदार की डांट-डपट से बच जाएगी जो उसे थोड़ी-सी भी देर होने पर उसे फटकार लगा देता है।

अपनी बारी आने पर वह कुएं की नीची दीवार पर झुकी, उसने कुएं में बाल्टी डाली और दोनों मटकों को धोने के लिए पानी बाहर खींचा। थोड़ी देर में उसने दोनों मटकों में पानी भर लिया। पहले उसने तांबे के मटके को उठाया और उसे संभाल कर सिर पर रख लिया। इसके बाद उसने एक और की मदद लेकर दूसरा मटका अपने कूल्हे पर बगल में दबा लिया। वह धीरे से पीछे मुड़ी। उसने अपने खाली हाथ से घड़े को स्थिर किया। जिस औरत ने उसे घड़ा पीठ पर रखने में मदद दी उसने उसको अहसान की नजरों से देखा और वह वापस अपनी गली की तरफ चल पड़ी। जब वह घर पहुंची तो रक्कू ने धीरे से पोन्नू को आवाज दी। बच्ची ने फौरन अपनी मां के बगल में कूल्हे के सहारे लगे मटके को नीचे उतरवाया और बड़े उत्साह से मां को बताने लगी कि उसने आज तीन मोटी-मोटी सूखी हुई डालियां ढूंढी हैं। ये टहनियां कम से कम कल रात के दलिये को गर्म करने के लिए काफी थीं। जल्दी ही टहनियां चूल्हे में दहकने लगीं। पीछे की झोपड़ियों के बीच बने संकरे फासले में से सूरज की पहली किरणें आने लगी थीं।

रक्कू को अपने पति करुपया के हिलने-डुलने की आवाजें सुनाई देने लगी थीं। रक्कू ने पानी के लिए अपनी पति की पुकार सुनते ही बेटी को एक लोटे में पानी लेकर भेज दिया। ठीक तभी दरवाजे से उसका बेटा कन्नन बाहर निकला। वह अपनी आंखें मींडते हुए सामने आ खड़ा हुआ। कन्नन तेज-तर्रार और शरारती बच्चा था। मौज-मस्ती के लिए उसकी देह में न जाने कहां से ताकत इतनी आ जाती थी कि उसकी कमजोर कद-काठी को देख कर हैरानी होने लगती थी। रक्कू के चेहरे पर चौड़ी-सी मुस्कान फैल गई। उसे अपने इस बेटे से बड़ा लगाव था। उसकी मुस्कान में वह राहत और संतोष था जो पहली संतान के रूप में बेटा पाने वाली सारी भाग्यशाली भारतीय स्त्रियों के चेहरे पर देखा जा सकता है। उसके जहन में अपने पहले प्रसव की यादें आज भी उसी तरह सजीव हो उठीं जिस तरह आठ साल पहले थीं। लेकिन उसे ये भी याद आया कि वह आज अपने बेटे पर गुस्सा है क्योंकि वह कल शाम को जलावन के लिए लकड़ी लाना भूल गया था। असज में लड़के ने डालियों का गट्ठर तो जुटा लिया था लेकिन तभी उसे एक शरारत सूझी और वह अपने एक दोस्त की गायों को चरागाह के पार एक बड़े बांध के पीछे छुपाने में जुट गया। जब गाय अचानक बेकाबू हो गई तो भागने की जल्दी में उसकी सारी लकड़ियां धरी की धरी ही रह गईं। जब तक कन्नन गाय को काबू कर पाता तब तक दिन छिपे काफी देर हो चुकी थी। सो, लड़के को खाली हाथ घर लौटना पड़ा। सारे रास्ते उसके यार-दोस्त उस पर फब्तियां कसते रहे। लेकिन घर आकर उसने अपनी मां को सच्ची कहानी नहीं बताई कि उसके हाथ खाली क्यों रह गए थे। फिर भी मां को ये कहानी वैसे भी समझ में आ चुकी थी।

रक्कू ने कोने में रखी सींक वाली झाडू उठाई और वह लिपे हुए अहाते में झाडू लगाने लगी। उसने सिर ऊपर उठाए बिना अपने बेटे की शरारतों के लिए उसको घुड़क दिया। वह अपने बेटे की आँखों में आँखें डालकर देखने की हिम्मत नहीं जुटा पाई क्योंकि उसको मालूम था कि बेटे की शरारत पकड़ लेने की वजह से वह अपनी मुस्कुराहट नहीं रोक

पाएगी। डांट-डपट खत्म हुई तो कन्नन भूख मिटाने के लिए मिट्टी के घड़े में झांकने लगा। उसको मालूम था कि जब तक उसके पिता शौच करके नहीं लौटेंगे तब तक उसे अपना हिस्सा नहीं मिलेगा।

पोनू ने चटाई समेटी ताकि उसकी मां कमरे में झाड़ू लगा सके। रक्कू ने दहलीज के बाहर भी गली में थोड़ी दूर तक बुहारकर वहां पानी का छिड़काव कर दिया। उसने पोनू से खड़िया का डिब्बा मंगाया और चुटकी में थोड़ी-सी खड़िया लेकर गीली जमीन पर परंपरागत कोलम का डिजाइन बना दिया। हर रोज सवेरे गांव के ज्यादातर घरों के दरवाजे पर ये खुबसूरत कलाकारी फैल जाती थी। यह अतिथियों और देवताओं, सभी आगंतुको के स्वागत का संकेत थी। ये मुखाकृति थोडी देर बाद उसके ऊपर से गुजरने वालो के पैरों से अस्त-व्यस्त होने लगती थी लेकिन इस चित्रकारी का सौंदर्य उतना महत्वपूर्ण नहीं था।

जब वह घर में दाखिल होने के लिए झुकी तो उसे छत के बाहर निकले छप्पर में कई छेद दिखाई दिए। उसको साफ लगने लगा कि ये छप्पर अगले जाड़े-बरसात में सर्द हवाओं से उसके परिवार को नहीं बचा पाएगा। लेकिन नया छप्पर डलवाना भी कोई मामूली काम नहीं था। ये एक नियमित खर्चा था जिससे गरीब परिवार हमेशा डरे रहते थे। उसको फौरन याद आया कि इस साल वे जरा-सी भी बचत नहीं कर पाए हैं। हालत इतनी खराब है कि रक्कू अपनी बेरंग हो चुकी और न जाने कितने पैबंदों से सजी सूती साड़ी को भी नहीं बदल पाएगी। मतलब साफ है - अगर उन्हें अगले साल अपने सिर पर छत चाहिए तो उन्हें महाजन से फिर कर्जा लेना पडेगा। दोबारा कर्जा लेने के खयाल से ही उसकी आंखें दर्द से मिच गईं।

उसका पति अभी लौटा था और दरी बिछा रहा था। रक्कू ने हौले से कन्नन को बगल में ढकेला और दलिये की एक प्लेट भर कर अपने पति के सामने रख दी। पति ने छोटी-सी टोकरी में से बची-खुची मिर्चों में से एक मिर्च निकाल कर अपनी अंगुलियों से उसका चूरा बनाया और हर ग्रास में थोड़ी-सी मिर्च मिलाकर दलिया खाने लगा। दलिया खत्म करके उसने रक्कू की तरफ देखा, "अगले हफ्ते जब कटाई खत्म हो जाएगी तो हम दोबारा भात खाएंगे।"

रक्कू ने सिर हिलाकर हामी भरी, "और क्या पता अगले महीने चित्राई पर्व के लिए हमारे पास एक कटोरी सांभर का भी इंतजाम हो जाए।" पिता के बाद पोनू और उसका भाई दरी पर बैठ गए और बेस्वाद दलिये पर ऐसे टूट पड़े जैसे किसी उत्सव की दावत हो। रक्कू ने बचे हुए दलिये में से कुछ बच्चों को परोस दिया। दाएं हाथ में दलिये की प्लेट और बाएं हाथ में अपने नन्हें शिशु को संभालते हुए वह भी खाने बैठ गई। जल्दी-जल्दी दलिया खाते हुए उसने अपनी प्लेट के एक कोने में थोड़ा सा दलिया छोड़ दिया और पोनू को हिदायत दी की दोपहर में बच्चे को यह दलिया खिला दे। अपना सिर हिलाते हुए उसने यह भी जोड़ दिया कि "ये तुम्हारे लिए नहीं है बिटिया, ये तुम्हारे छोटे भाई के लिए है।" लड़की ने सिर हिलाया लेकिन अपनी मां की नजरों से हटते ही उसके होंठ भिंच गए।

करुपाया पहले ही घर से निकल चुका था। जमींदार के खेतों में पहुंचने से पहले रास्ते में वह चाय की गुमटी पर रुकेगा और वहां पानीदार चाय का प्याला पीकर आगे जाएगा। कन्नन हाथ धोने के लिए उठ खड़ा हुआ और खूब सारा पानी पीकर वह भी उन मवेशियों को हांकने चल दिया जिनको उसे दिन भर चराना था। सात साल की उम्र से ही वह परिवार की आय में हाथ बंटाने लगा था। वह कई भूस्वामी परिवारों के मवेशियों को चराने के लिए उन्हें रोज खुले मैदान में ले जाता था। यह मेदान गांव से तकरीबन एक किलोमीटर दूर था। कभी-कभी वह उन्हें खेतों की मेढ़ों पर भी चराता था जहां घास के छोटे-छोटे पैबंद उग आए थे। भूस्वामियों को पता था कि कन्नन उनके मवेशियों की अच्छी देखभाल करता है। कन्नन की आमदनी थोड़ी थी लेकिन घर का पेट पालने के लिए उसकी थोड़ी आय भी खासे मायने रखती थी।

कन्नन के जन्म से ही रक्कू का ये सपना था कि उसका बेटा एक दिन स्कूल जाकर लिखना-पढ़ना सीखेगा। लेकिन चार साल पहले तो उसके पति को अपना छोटा सा खेत भी बेचना पड़ा और उसके बाद रक्कू के सारे सपने हवा होते चले गए। अब तो परिवार के लिए बेटे की आमदनी ज्यादा महत्वपूर्ण हो गई है। रोज सुबह जब वह उसे जाते हुए देखती है तो उसके कलेजे में एक टीस-सी उठ कर रह जाती है।

गली से गुजरती औरतों की बातचीत से उसे याद आया कि उसे काम के लिए देर हो रही है। उसने जल्दी से बच्चे को पोनू की गोद में थमाया, हाथ धोए और घर से बाहर निकल गई। उसे अपनी बेटी पर बड़ा अभिमान था। पोनू की उम्र सिर्फ 5 साल थी लेकिन वह पूरे घर और बच्चे की देखभाल का जिम्मा उस पर छोड़कर जा सकती थी। उसने तरस खाकर उन औरतों के बारे में सोचा जिनके पास काम पर जाते हुए घर में ताला लगाने के अलावा कोई चारा नहीं होता। शाम तक उनके बच्चे बिना किसी की देखरेख के बाहर भटकते रहते हैं। कम से कम उसके बच्चों के पास दिन भर देखभाल के लिए घर में कोई तो है, चाहे पोनू जैसी छोटी-सी बच्ची ही क्यों न हो।

रक्कू तेज कदमों से गलियों को लांघती हुई सवर्णों के मंदिर की बगल से गुजर गई। दूसरी औरतें भी पेरियास्वामी के खेतों की तरफ जा रही थी। उसके खेत गांव से एक किलोमीटर से भी ज्यादा दूर थे। इस दूरी की वजह से वे दोपहर को घर नहीं लौट सकती थीं। इसलिए कुछ औरतें दोपहर को खाने के लिए छोटे-छोटे बर्तनों में पतला दलिया भर लाती थीं। रक्कू तलाब के साथ-साथ चलती चली गई। तालाब के एक कोने पर अभी-भी उथले पानी का एक टुकड़ा बचा हुआ था। इसी गंदले पानी में दो लड़के भैंसों को नहला रहे थे और उनकी पीठ पर बैठकर सवारी गांठ रहे थे। कन्नन भी थोड़ी देर में अपने जानवरों के झुंड लेकर यहीं आएगा। सूरज सिर पर आ चुका था जिसकी वजह से पानी की ठंडक बड़ी अच्छी लग रही थी। रक्कू तालाब की मेढ़ के दूर वाले छोर पर पहुंच गई और फिर उसके किनारे-किनारे चलने लगी। थोड़ी देर में वह बाकी औरतों में जा मिली।

जमींदार के खेतों में इस साल बड़ी अच्छी फसल हुई थी। कुछ साल पहले उसने सरकार से कर्जा लेकर सिंचाई के लिए एक पम्प लगवा लिया था इसलिए उसके खेतों में नियमित रूप से सिंचाई की व्यवस्था थी जिसके कारण उसके खेतों में बढ़िया फसल होती थी। भूमिहीन परिवारों की औरतों के लिए उसके खेत में काम करना रोजगार का अच्छा जरिया था। उसके पास काम करने के लिए वे सदा कोशिश करती थीं कि पूरे सीजन में उसके यहां ही काम करें। जिन कुछ परिवारों के पास अपने छोटे-मोटे खेत थे उनको भी पहले भूस्वामी के खेत जोतने पड़ते थे। वे अपने खेतों में कटाई भी तभी कर सकते थे जब जमींदार के खेतों में कटाई खत्म हो जाती थी। जब तक ये औरतें खेतों में पहुंचीं तब तक उनके बदन पर पसीने की बूंदे छलकने लगी थीं। जमींदार का मुंशी दूर से ही चिल्लाया और वे फटाफट चारों ओर फैल कर अपने-अपने काम में जुट गईं। उन्होंने पीठ में खोंसा हुआ हंसिया निकाला और वे अनाज के पके हुए पौधे काटने लगी।

...जब वह पौधे की एक और मुट्ठी भरने के लिए झुकी तो उसकी पीठ और कंधे में इतना तीखा दर्द उठा की उसका हाथ सुन्न पड़ गया। रक्कू के हाथ से हंसिया फिसल कर गिर पड़ा। बड़ा जतन करके वह सीधी खड़ी हुई। तीसरे पहर का वक्त हो चला था। उसके स्तन भारी हो गए थे और सुबह से बच्चे को दूध न पिलाने की वजह से उनमें दर्द होने लगा था। उसने साड़ी का पल्लू लेकर अपने चेहरे और गर्दन पर बहती पसीने की धारों को पोंछ दिया। खेत के दूर वाले छोर पर सूरज नारियल के झुंडों में घुम होने लगा था लेकिन अभी-भी धूप बहुत तेज थी। उसकी पड़ोसी और सहेली मुथुम्मल थोड़ी दूर काम कर रही थी। वह हाथ हिलाकर रक्कू को इशारा कर रही थी। मुथुम्मल बताना चाहती थी कि उसका एक और गट्ठर तैयारा हो गया है। रक्कू भी नीचे झुकी और उसने पौधों का एक गट्ठर बना कर उसे धीरे से उसे सिर पर स्थिर कर लिया। तभी मुंशी ने एक और गट्ठर ऊपर रख दिया जिससे वह फिर झुक गई। अनाज के गट्ठर इतने भारी थे कि अपना संतुलन बनाए रखने के लिए उसे अपनी रीढ़ एकदम सीधी रखनी पड़ रही थी।

गट्ठर दोनों तरफ लगभग उसकी कमर तक लटक गए थे और चेहरा फूंस से ढक गया था। उसे अपनी तरफ आती मुथुम्मल के पैरों की आवाज तो सुनाई दी लेकिन चेहरा दिखायी नहीं दिया। उसे बगल से गुजरते समय केवल उसके पैर और साड़ी ही दिखाई दी। धीरे-धीरे वह उसके पीछे चल पड़ी। अब वह धीमी चाल से चल रही थी क्योंकि हर कदम पर हल्की-सी उछाल से भी उसकी गर्दन और रीढ़ पर दबाव कम हो जाता था। उसकी सांस एक नपे-तुले मंत्र की आवाज जैसी लगती थी। खेत में रह गई ठूंठों से रक्कू से तलवे और गट्टे छिल गए थे। उसके तलवे तो बचपन से ही सख्त थे इसलिए यह दर्द उसे ज्यादा महसूस नहीं होता था।

गांव के किनारे पर खलिहान में पहुंचकर उसे अपना पति धान के ऊंचे ढेर पर खड़ा दिखाई दिया। नीचे से औरतें

उसकी तरफ गट्ठर फेंके जा रही थीं और वह उन्हें लपककर ढेर के ऊपर जमा देता था। उसे अपने पति को काम करते देखकर बड़ी तसल्ली हुई क्योंकि कितने ही हफ्तों, महीनों से उसके पास कोई काम नहीं था। दो-तीन दिन में पेरीसामी के खुत में कटाई खत्म हो जाएगी और वे बंटाई के नाम पर चावल का अपना थोड़ा सा हिस्सा लेकर घर लौट जाएंगे। रीत के मुताबिक भूस्वामी तीन-चौथाई अनाज अपने पास रखेगा और एक-चौथाई अनाज इन मजदूरों के बीच बंट जाएगा।

एक-एक करके औरतों खलिहान में पहुंचतीं और अपना गट्ठर ऊपर की तरफ उछाल देती। इसके बाद वे फिर एक किलोमीटर दूर पड़ा दुसरा गट्ठर लेने चल पड़ती। बचे हुए गट्ठर लाने तक दूर आसमान के किनारे सूरज खूब बड़ा और संतरी रंग का हो चुका था। हालांकि की खेतों से अनाज लेकर आना थकाने वाला काम था लेकिन इस काम से ही उन्हें सबसे ज्यादा राहत मिलती थी और आत्मा हल्की हो जाती थी। अपने बच्चों या नाती-पोतियों का पेट पालने के कभी न खत्म होने वाले संघर्ष में यही काम उन्हें कम-से-कम अगले कुछ महीनों के लिए जीने का जरिया देता था।

मुथुम्मल और अन्य महिलाओं के साथ गांव की तरफ लौटते हुए रक्कू की बांहों और पीठ में अभी-भी सुन्नापन था। फिर भी वह तेजी से चलती रही। उसे मालूम था कि उसका नन्हा-मुन्ना अपनी मां के दूध के लिए रो रहा होगा। घर जाकर उसे मोटा बाजरा भी पकाना था और सुबह उसने जो मन्नत मांगी थी उसे पूरा करने के लिए मंदिर भी जाना था।

पोनू घर की दहलीज पर झुटपुटे में मां का इंतजार कर रही थी। उसका छोटा भाई उसकी गोद में रो रहा था। रक्कू ने जाते ही बांह फैलाकर उसे अपने हाथों में लिया और छाती से लगा लिया। उसे फौरन महसूस हो गया कि बच्चे के कपड़े गीले हैं। उसने सवालिया निगाहों से पोनू की तरफ देखा।

“मां इसको दिन भर दस्त लगे हुए थे। जब भी मैं उसको धोकर लाती, उसके कपड़े साफ करती, वह और कर देता था। जितनी बार भी मैंने उसे दलिया खिलाया, वह उल्टी कर दी।”

रक्कू ने कुछ नहीं कहा। वह बच्चे को अंदर ले गई और उसे जमीन पर लिटा दिया। वह खुद भी दीवार से लग कर बैठ गई और नन्हा बच्चा भूख से उसके स्तनों पर लटक गया। उसने कमर पर अपनी साड़ी को ढीला कर दिया और पल्लू में बंधी गांठ खोलकर दस पैसे का एक सिक्का निकाला। उसके पास यही एक सिक्का था। सिक्का पोनू के हाथ में रखकर उसकी मुट्ठी बंद करके उसे समझाया “स्कूल के पास वाली दुकान पर जाना और पांच पैसे की दस्तों की दवाई वाला चूरन लेकर आना। ध्यान से जाना। देखना कि वह पूरी चम्मच भर कर दवाई दे। फिर बाकी पांच पैसे से वहीं फूलों की दुकान से पूजा वाले सुनहरे फूल खरीद लेना।” उसने अपनी बेटी की पीठ पर थपकी देकर उसे रवाना कर दिया।

शाम के धुंधलके में बच्चे का चेहरा साफ-साफ देखना मुश्किल हो गया। अभी भी उसे अपने शरीर में लंगड़ाहट महसूस हो रही थी। उसने महसूस किया कि बच्चे के दस्त बहुत गंभीर थे। उसका सिर फिर पीछे दीवार से टिक गया। उसे छोटे बच्चों में दस्त की कल्पना करके भी डर लगता था! वही क्या, सारी माएं डरती थीं। और तभी कुछ महीने पहले मुथुम्मल के सबसे छोटे बच्चे की मौत के खयाल से उसका चेहरा अचानक ऐंठ गया। “नहीं”, उसने अपने आप से कहा, “मेरे बच्चे के साथ ऐसा नहीं होगा।”

उसने गौर से अपने बच्चे की तरफ देखा। रक्कू की अंगुलियां लगातार उसके चेहरे, सिर और हाथ-पैरों को सहला रही थी। बच्चे की अंगुलियों और पांवों की हल्की-हल्की मालिश करते हुए उसे इस बात का अफसोस भी हुआ कि वह अपने बच्चे को ऐसा कुछ भी नहीं दे पा रही है कि उसकी ताकत बढ़े। फिर भी, न जाने क्यों जब वह अपने बच्चे को देखते हुए यह सब सोच रही थी, उसकी शर्मिंदगी और अपराधबोध एक नामालूम गुस्से में तब्दील होने लगा। ये गुस्सा बच्चे पर नहीं था। न ही अपने ऊपर था। यह गुस्सा इस बच्चे की जिंदगी की अस्थिरता पर था, उसे बचाने की कोशिश में अपनी लाचारी पर था।

कन्नन के घर में दाखिल होने की आहट सुनाई दी तो उसके विचारों पर विराम लग गया। उसने कन्नन को आवाज दी और उसे कुएं से एक घड़ा पानी भर कर लाने को कहा। लड़के ने विरोध किया। उसने दलील दी की पानी भर कर लाना तो लड़कियों का काम होता है। अगर उसके दोस्त उसे पानी लाते देखेंगे तो बहुत चिढ़ाएंगं। वैसे भी, आज वह टहनियों का इतना सारा ढेर भी तो लाया है!

"कन्नन, तुम्हारे भाई को दस्त लग गए हैं। उसे फिर से साफ करना पड़ेगा। मुझे अभी बहुत काम करना है। मेरा कहना मानो, जाओ पानी ले आओ।" पोनू कागज की पुड़िया में लिपटी दवाई और फूल लेकर लौट आई थी। मां के कहे अनुसार वह भीतर से सुंगू कप (दक्षिण भारत में शिशुओं को खाना खिलाने के लिए इस्तेमाल होने वाला छोटा सा प्याला) लाई और उसे पानी से धोकर मां को थमा दिया। रक्कू ने बेटी के हाथ से प्याला लेकर धीरे से अपने स्तनों को दबाया और प्याले में दूध की कुछ बूंदें टपका दीं। नन्हा सा कप आधा भर गया। इसके बाद उसने पोनू का लाया चूरन दूध में मिलाया और प्याली की टोंटी को बच्चे के होंठों में ढकेल लिया। हर बार जब बच्चा छोटा सा घूंट गटकता तो रक्कू हथेली से उसके गले पर छाती की तरफ सहला देती।

प्याली खाली हो गई तो उसने उनींदे बच्चे को पोनू को पकड़ा दिया। वह खुद फूल लेकर गांव के किनारे बने मंदिर की तरफ चल पड़ी। उसने गैंदे के तीन पीले फूल उस पत्थर के आगे रख दिए जिस पर पीढ़ियों से लोग लाल पवित्र राख का टीका लगाते आ रहे थे। इसके बाद उसने देवी मरियम्मन के जितने भी नाम याद थे, दोहरा डाले। फिर वह पीछे मुड़ी और जल्दी-जल्दी घर को चल पड़ी।

जब वह घर पहुंची तो पोनू अहाते के कोने में एक सपाट पत्थर पर बच्चे को नहला रही थी। उसने टांगें फैलाकर बच्चे को उन पर बैठाया हुआ था। उसने कितनी ही बार मां को उसे इस तरह नहलाते हुए देखा था। उसे यकीन था कि अब वह भी उसे नहला सकती है। कन्नन दलिये के लिए पानी उबालने के वास्ते आग जलाने की कोशिश कर रहा था। ....

पूरी रात दस्तों का सिलसिला चलता रहा। लगता था कि चूरन से असर नहीं पड़ा था। रक्कू की पूरी रात बच्चे को साफ करते और उसको चुप कराने में बीत गई। सवेरा होते-होते उसको समझ में आ गया था कि बेटे को इलाज के लिए ले जाना ही पड़ेगा। पंद्रह किलोमीटर दूर कस्बे में एक डॉक्टर बैठता था। एक बार कन्नन को कोई संक्रमण हुआ था तो इसी डॉक्टर के इंजेक्शन से वह ठीक हो गया था। लेकिन उसने पैसे बहुत लिए थे। पूरे तीन रुपये। इस बार भी उन्हें कर्जा ही लेना पड़ेगा। उसको यकीन था कि उसका आदमी कर्जे के खयाल पर राजी नहीं होगा। इस वक्त तो ये वैसे भी नामुमकिन था। इस वक्त किससे पास देने के लिए पैसा रखा होगा? उनकी तरह ज्यादातर परिवार पहले ही नयी कटाई तक गुजारा चलाने के लिए कर्जा ले चुके थे। भूस्वामियों और महाजन के अलावा और कोई उन्हें पैसा नहीं दे सकता था। लेकिन वे इतना ज्यादा ब्याज लेते थे कि पूछो मत! एक रुपये पर महीने में 25 पैसे तक! ऊपर से अब वह खेतों का काम भी कैसे छोड़ सकती थी! अगर वह खेत में नहीं जाएगी तो जमींदार उसे अब तक की मजदूरी का वाजिब हिस्सा भी नहीं देगा।

सुबह जब उसका पति जागा तो उसे ये समझ में आ गया था कि वह बच्चे को कस्बे ले जाना चाहती है। फिर भी रक्कू के पास ये कहने की हिम्मत नहीं थी। लिहाजा, उसने तय किया की वह उसे गांव में ही मीना दायी के पास ले जाएगी। कम से कम मीना ये तो बता देती थी कि बच्चा कितना बीमार है। कभी-कभी उसकी बनायी जड़ी-बूटियों की दवाई से बच्चे को आराम भी हो जाता था। उसकी दवाई कभी-कभी दस्त का ईलाज भी कर देती थी। लिहाजा, जब उसका पति खाना खा चुका तो वह बच्चे को लेकर दायी के घर चल पड़ी। दायी के घर में उसकी सास के अलावा और कोई न था। कूबड़दार बूढ़ी औरत ने धीरे से हाथ उठाकर इशारा किया कि मीना काम के लिए खेत में जा चुकी है।

रक्कू अभी-भी यही चाहती थी कि दायी उसके बच्चे को देख ले। लेकिन क्या करती! वह घर लौट आयी और उसने पोनू को समझाया कि वह बच्चे को लेकर मीना के पास जाए। उसने बेटी को ये भी समझा दिया कि इस वक्त मीना

कहां मिलेगी। वह खुद मीना के पास नहीं जा सकती थी। उसे खेत के लिए पहले ही देर हो चुकी थी। उसने जल्दी-जल्दी बचा हुआ दलिया खाया। एक बार फिर मुड़कर अपनी पांच साल की बेटी के हाथों में अपने नन्हे लाचार बच्चे को देखा और आगे बढ़ गई।

...उसकी पीठ पर पसीने की धार बहने लगी थी। थोड़ी देर में उसकी साड़ी उसकी पीठ और टांगों पर चिपकने लगी। सारे दिन उसके काम में कोई लय नहीं थी। उसका दिमाग काम की बजाय अपने बच्चे में अटका हुआ था। उसकी सहेलियों को कुछ पता नहीं था इसलिए शुरू में वे उससे चुहल भी करती रहीं। मुंशी भी उस पर जोर से चिल्लाया क्योंकि उसे भी दिन भर धूप में सारी औरतों पर नजर रखनी पड़ती थी।

अनाज का आखिरी गट्ठर लाने के बाद उसने दूसरी औरतों का इंतजार नहीं किया। वह सीधे घर की तरफ दौड़ पड़ी। उसका बच्चा जोरों से रो रहा था इसलिए उसने फौरन बच्चे को दूध से लगा लिया। थोड़ी देर में उसका पेट भरा तो वह बेसुध होकर रक्कू की गोद में ही सो गया। पर ये क्या, अभी थोड़ी ही देर हुई थी उसने सारा दूध उलट दिया। उसने पोनू को एक और कपड़ा लाने को कहा तो लड़की ने बताया कि मीना ने सुबह क्या कहा था। "उन्होंने कहा था कि तुम शाम को खाने से पहले उनके पास चली जाना। वह इसे जड़ी-बूटियों की दवाई दे देंगी। मम्मी, उन्होंने कहा था कि तुम जरूर आना।"

जब रक्कू दायी के घर पहुंची तो सूरज छिप चुका था। दायी ने फौरन बच्चे के सिर पर हाथ फिराया। वह बच्चे के नरम पेट पर उंगलियां दबा-दबा कर महसूस करने लगी। उसने रक्कू की तरफ देखा। "सूखापन शुरू हो गया है रक्कू। दस्त बहुत गंभीर हैं। जाओ जल्दी से पुडूथावल की पत्तियां ले आओ, मैं दवाई बना देती हूं।" फिर उसने रक्कू को समझाया कि ये पत्तियां कहां मिलेंगी।

मीना बहुत सालों से गांव की दायी थी। निचली जाति की ज्यादातर औरतों की तरफ वह भी पढ़ी-लिखी नहीं थी। उसने अपनी सास से ये हुनर सीखा था जो उससे पहले दायी का काम करती थी। अब वह भी दादी बन चुकी थी और उसकी उम्र चालीस से पचास के बीच थी हालांकि ज्यादातर गांव वालों की तरह उसे भी अपनी उम्र सही-सही पता नहीं थी। उसके पति का परिवार गरीब था लेकिन मांओं और छोटे-छोटे बच्चों की देखभाल का उसके पास लंबा अनुभव था इसलिए गांव की ज्यादातर औरतें, यहां तक कि ऊंची जाति की औरतें भी उसकी राय पर भरोसा करती थीं। चाहे कोई औरत अछूत हो या ऊंची जाति की हो, वह सबकी एक भाव से देखभाल करती थी। वह दुबली-पतली मगर मजबूत औरत थी और उसके चेहरे पर भी खेतों में सालों की मेहनत की लकीरें दिखने लगी थीं।

रक्कू कुछ ही देर में पत्तियां लेकर लौट आयी। मीना ने थोड़ी-सी पिसी हुई हल्दी और आले में रखी दूसरी पत्तियां लेकर उन्हें छोटी-सी ओखली में पीस दिया। सिल पर बाट चलाते हुए वह बार-बार इस मिश्रण को हथेली और छोटी अंगुली से सील के बीच में समेट देती थी। जब सारी जड़ी-बूटियां अच्छी तरह पिस गईं तो उसने थोड़ी-सी सूखी दवाई अपनी हथेली पर रख ली। रक्कू ने अपनी साड़ी का पल्लू खोला और पिसी हुई दवाई उसमें रख कर गांठ बांध ली।

दायी ने समझाते हुए कहा "आज रात को और सुबह ये दवाई उसे दे देना।" फिर रुक कर कहा "कहते हैं कि दस्त में बच्चे को भूखा रखना चाहिए लेकिन रक्कू मैंने तो अपने बच्चों को दूध पिलाना कभी नहीं रोका चाहे उन्हें कितना भी दस्त रहा हो। और भले ही मैं ये दवाइयां दे देती थी, अगर मेरा बच्चा होता तो मैं उसे कस्बे के डॉक्टर को भी जरूर दिखाती। अगर जल्दी जाओ तो अभी-भी तुम्हें पलायानूर गांव से बस मिल सकती है।" लेकिन उसे हालात अच्छी तरह पता थे, इसलिए पूछा "क्या तुम्हारा आदमी तुम्हे जाने देगा?"

रक्कू ने चुपचाप अपने बच्चे को पीठ पर लाद दिया। दायी को सारी बात समझ में आ गई। ज्यादातर भूमिहीन परिवारों में यही चलता था। अपने हाथ चार पैसे बचाकर रखना रेत में बहते पानी को रोकने की कोशिश जैसा था। आखिरकार उसने बस इतना ही कहा, "देखती हूं।" इसी बीच मीना अपनी साड़ी के पल्लू की गांठ खोलनी लगी और उसने तुड़ा-मुड़ा सा एक रुपये का नोट निकालकर रक्कू के हाथ में रख दिया। "पास वाले गांव में कल रात एक घर में बच्चा हुआ था - पहली संतान थी और वो भी बेटा। उन्होंने ही मुझे ये रुपया दिया था। जब तुम दोबारा दिहाड़ी कमाने

लगोगी तो मुझे लौटा देना।" रक्कू सिर हिलाते हुए बाहर निकल गई। उसने अपने आप से वादा किया कि जब उसे कटाई में से अपना हिस्सा मिलेगा तो वह कुछ चावल मीना को भी दे देगी।

जब उसने अपने पति को दायी की सलाह बतायी तो वह चुप बैठा रहा। रक्कू को मालूम था कि मन ही मन में वह क्या सोच रहा है। भला रात में वह अपनी बीवी को अकेली कैसे जाने दे सकता था? ऊपर से इंजेक्शन और बस भाड़े के लिए 4-5 रुपये का कर्जा कौन देगा? रक्कू को अपने पति की खामोशी से डर लगता था। वह इसका कोई उत्तर नहीं दे सकती थी। वह अचल खड़ी रही। आखिरकार वह पीछे अहाते में चली गई।

थोड़ी देर में उसे पति के बाहर जाने की आवाज आई। कुछ मिनट बाद जब वह लौटा तो उसने धीरे से अपनी पत्नी को आवाज लगाई। "आओ, जल्दी चलो वरना पलायानूर की बस नहीं मिल पाएगी।" रक्कू ने फूंस की दीवार में से फटा हुआ एक कपड़ा निकाला जिसे पोनू ने थोड़ी देर पहले ही धोया था। ये चिथड़े अभी भी गीले थे। उसने कन्नन और पोनू को आवाज देकर कहा कि वे उनके लिए चावल की बाटी लेकर आएंगे। इतना कह कर वे दोनों अपने बच्चे को लेकर चल पड़े। रक्कू पति की तेज चाल में कदम मिलाती दौड़ती रही।

पलायानूर गांव सिर्फ एक किलोमीटर दूर था लेकिन रास्ता बहुत संकरा था और बैलगाड़ियों से उसमें गहरी लीकें बन गई थीं। शाम की आखिरी किरणें भी जा चुकी थीं। अगर रक्कू एक पल को भी आंख ऊपर उठाती तो वह सख्त हो चुकी कीचड़ में ठोकर खा जाती। अब उसका बच्चा इतना बेसुध हो चुका था कि उसे दोनो हाथों से संभालना पड़ रहा था।

...जैसे ही डॉक्टर ने "दस्त" शब्द सुना, उसने पीछे रखी मेज की तरफ हाथ बढ़ाया और बेसिन में से एक सिरिंज व सुईं उठा ली। पास में ही मे मिट्टी के तेल की ढिबरी पर छोटे-से बर्तन में पानी उबल रहा था। इंजेक्शन के बाद रक्कू बिना कहे ही बच्चे के नितम्ब को सहलाने लगी। उसके पति ने डॉक्टर को तीन रुपये थमा दिए - एक रुपये का नोट और बहुत सारी रेजगारी। यह आदमी स्थानीय लोगों में "डॉक्टर" माना जाता था हालांकि उसके पास कोई ट्रेनिंग नहीं थी सिवाय इसके कि वह सालों से अपने चाचा को यही काम करते हुए देख रहा था। गांव वाले हमेशा उसके पास ही जाते थे भले ही वह अच्छे-खासे पैसे लेता था। उन्हे वह अच्छा लगता था क्योंकि वह हमेशा इंजेक्शन जरूर लगाता था और उनके साथ अच्छी तरह इज्जत से बात करता था।.................. डिस्पेंसरी शाम को नहीं खुलती थी जिस समय गांव वाले उसमें जा सकते। वैसे भी अकसर ही सरकारी डिस्पेंसरी में या तो दवाइयां नहीं होती थीं या सब रोगों के लिए हमेशा पीली गोलियां थमा दी जाती थीं। इसके अलावा, उन्होंने सुना था कि वैसे तो डिस्पेंसरी "मुफ्त" थी लेकिन मरीजों को क्लर्क के हाथ में कुछ न कुछ सिक्के रखने ही पड़ते थे। डिस्पेंसरी का डॉक्टर जवान था और मरीजों से अक्सर बहुत रूखे ढंग से बात करता था।

"डॉक्टर" ने बताया कि बच्चे को कौन-कौन-सी चीजें नहीं खिलानी हैं। रक्कू ने उसकी बात में जोड़ा "और मां का दूध।" डॉक्टर ने नजर ऊपर उठाई और जवाब दिया, "बहुत सारे लोग कहते हैं कि मां का दूध भी नहीं देना चाहिए।"

वे इस छोटी "डिस्पेंसरी" से बाहर निकले तो इलाज के लिए लोगों की कतार अभी भी लगी हुई थी। बची हुई रेजगारी से करुपाया ने सिंकी हुई चावल की बाटियों के दो पैकेट खरीद लिए। पलायानूर को जाने वाली आखिरी बस का इंतजार करते हुए उसने एक पैकेट वहीं खा लिया। रक्कू का पेट भी भूख से जल रहा था लेकिन उसने कुछ नहीं खाया। वह दूसरे पैकेट में से बच्चों को खिलाने के बाद ही कुछ बचा-खुचा खाएगी।

जब वे पलायानूर में बस से उतर कर अपने घर की तरफ चले तब तक आसमान में मृग तारा बिल्कुल सिर के ऊपर आ चुका था। बच्चा गोद में गहरी नींद सो रहा था और उसके दस्त वाकई रुक गए थे। "इंजेक्शन डॉक्टर" ने जो दवाई दी थी उसमें नींद लाने वाली और ऐस्प्रीन जैसी किसी दवाई का मिश्रण था। इस दवाई ने बच्चे का बुखार और बैचेनी खत्म कर दी थी। कम से कम कुछ देर के लिए यह दवाई छोटे बच्चों के पेट दर्द को शांत कर देती थी। ये बदलाव बहुत तेज होता था इसलिए गांव की मांओं को डॉक्टर पर भरोसा और बढ़ जाता था। ज्यादातर बच्चों में बुखार के लिए यह कारगर ईलाज भी था। उनको यह मालूम नहीं था कि यही दवाई वे बहुत कम लागत पर बाहर से भी

खरीद सकते थे।

जब वे पुलियानगुलम पहुंचे तो गांव की गलियों में अंधेरा और पसर चुका था। जिस तरह वे सारे रास्ते खामोश चले आए थे, चुपचाप अपनी झोपड़ी में दाखिल हो गए। रक्कू ने कन्नन और पोनू को जगाकर उन्हें चावल की बाटी का पैकेट थमा दिया।

जब दवाई का असर खत्म हुआ और बच्चे की नींद खुली तो लगभग सवेरा हो चला था। इंजेक्शन डॉक्टर की हिदायत के बावजूद रक्कू प्यासे बच्चे को दूध पिलाने लगी। उसे मीना के शब्द याद थे और उस पर भरोसा भी ज्यादा था। सुबह को रक्कू के खेत में जाने के बाद इंजेक्शन का नशा पूरी तरह खत्म हो चुका था और दस्त दोबारा शुरू हो गए थे। शाम को जब पोनू ने एकदम बेजान हो चुके शिशु को मां की गोद में थमाया तो वह दोबारा उसे लेकर दायी के पास गई। दायी ने इस बात की तस्दीक कर दी की बच्चे में सूखा बढ़ गया है। मीना को अब बच्चे की जिंदगी खतरे में दिखाई दे रही थी। हिचकिचाते हुए उसने रक्कू को पेचिशग्रस्त बच्चो की कहानियां सुनाई..........................।

रक्कू शहर का जिक्र सुनकर अपनी बदनसीबी पर हंस पड़ी। “ऐसी बातें करके मुझे दुखी मत करो ताई। शहर तो यहां से 40 किलोमीटर दूर है। इतने लंबे सफर के लिए भला हम बस का भाड़ा कहां से लाएंगे? और पूरे दिन की छुट्टी भी किसके पास है? तुम ऐसे बोलती हो तो मुझे बड़ा खराब लगता है!”

अधेड़ औरत को सब समझ में आ गया। वह कुछ न बोली। फिर भी ये तो तय था कि उसे शहर के अस्पताल में ईलाज कराने के अलावा और किसी चीज से बच्चे की जान बचने की उम्मीद नहीं थी। वह जानती थी कि रक्कू के शब्दों में जो गुस्सा था वह उसकी तरफ नहीं था। रक्कू का गुस्सा उसकी अपनी लाचारी पर था।

रक्कू शायद ही कभी जिंदगी में कभी सबके सामने रोई होगी। गांव समुदाय में इस तरह की भावना को अच्छा नहीं माना जाता है इसलिए औरतों ने अपनी हताशा और दुख को दबाकर रखना सीख लिया था। लेकिन आज की रात अलग थी। घर लौटते हुए उसकी आंखों से आंसू रुकने का नाम न लेते थे। अपने दिमाग में उसे अपने तीसरे बच्चे को बचाने के लिए की जद्दोजहद की तस्वीरें घूम गईं। जन्म के एक हफ्ते बाद ही उसकी मौत का दर्द अभी भी रक्कू भुला नहीं पाई थी। अब इस बच्चे की हालत देखकर उसका यही दर्द और भी तीखा हो गया था।

जब वह घर पहुंची तो उसने अपने पति से कुछ नहीं कहा। रात का खाना खत्म करने के बाद कहीं जाकर रक्कू ने हिम्मत जुटाकर अपने पति को मीना की सलाह बताई। इस बार चुप्पी नहीं थी। वह बिना हिले-डुले दीवार से टिककर खड़ी रही। उसे अच्छी तरह पता था कि वह क्या कह रही है। अब वे और कर्जा कहां से ला सकते थे सिवाय इसके कि उन पर महाजन का कर्जा और चढ़ जाता। कटाई में अपना हिस्सा गंवाए बिना काम से छुट्टी लेने की भी कोई उम्मीद नहीं थी। और सबसे बढ़कर, रक्कू, एक औरत, अकेले शहर कैसे जा सकती थी? ...पत्नी से दूसरी तरफ देखते हुए कुरूपाया ने कहा, “क्या भगवान ने हमारे दूसरे बेटे को नहीं उठा लिया था? तो क्या अब वे इसे नहीं उठाएंगे?” शायद उसने ये बात इसलिए नहीं कही थी क्योंकि उसे इस बात का यकीन था बल्कि उसने इसलिए ये कहा क्योंकि वह दूसरे अनुत्तरित प्रश्नों की गहरी पीड़ा से छटपटा रहा था।

न जाने क्यों रक्कू को इस बच्चे की जान बचाने के लिए दिल में एक गहरी हूक-सी उठी। न जाने क्या चीज थी जो उसे अपने बेटे की मौत को स्वीकार नहीं करने देती थी। शायद इससे कि पहले वाले बच्चे की मौत का दुख अभी भी बहुत तीखा था? और ये भी तो सच है कि क्या एक मौत के बाद मां का कलेजा अपने दूसरे बच्चे की मौत के लिए और सख्त नहीं हो जाता? ...शायद उसकी ये चाह मीना की सलाह का नतीजा हो। वह जब नई-नवेली दुल्हन बनकर इस गांव में आई थी तभी से वह मीना पर भरोसा करने लगी थी। मगर उसके भीतर एक गुस्सा भी उबल रहा था। किस चीज पर था उसका गुस्सा? ...वह ठीक-ठीक नहीं कह सकती थी हालांकि उसे अच्छी तरह पता था कि गांव की कुछ औरतें जब चाहे, इलाज के लिए अपने बच्चों को शहर ले जा सकती थीं।

अपने पति की तरफ देखते हुए अचानक रक्कू ने बड़ी हिम्मत से कहा “नहीं। मैं कुछ कोशिश करके देखती हूं। मैं

शहर जाकर देखूंगी। हालांकि जमींदार अनाज का मेरा हिस्सा काट लेगा लेकिन जो कुछ भी मिलेगा उसमें से हम कर्ज के रुपये चुका देंगे। अगर भूखों मरने की नौबत आई तो मैं पीतल के बर्तन बेच दूंगी।”

उसने पहले कभी अपने पति से इस अंदाज में बात नहीं की थी। वह जितनी डरी हुई थी, उतनी ही हैरान भी थी। और हांलाकि कुरूपाया तर्क देता रहा लेकिन वह भी बच्चे के प्रति अपने स्नेह और पत्नी के लाड के सामने झुक चुका था। उन दोनों को मालूम था कि उनका परिवार कितनी मुश्किल से भुखमरी से बचा हुआ है। इस जद्दोजहद से घर के एक-एक मेम्बर की जरूरतों को पूरी करने का दबाव सदा मुश्किल बना रहता था। गरीबी और बेसहारेपन की विभाजक रेखा इतनी बारीक थी कि किसी एक बच्चे पर जरा सा भी ज्यादा ध्यान देना इस संतुलन को बिगाड़ सकता था। लेकिन ये भी सच था कि एक-एक बच्चा परिवार के लिए सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण स्रोत था। खासतौर से एक लड़के की मौत परिवार के लिए एक बहुत बड़ा नुकसान थी। इस बच्चे के लिए उमड़ रहे प्यार और बच्चे को बचाने की जरूरत के चलते आखिरकार कुरूपाया ने अपनी पत्नी को शहर जाकर बच्चे का इलाज कराने पर अपनी रजामंदी दे दी।

अगले दिन सुबह-सवेरे रक्कू पलायानूर से शहर जाने वाली बस में बैठ गई। उसके पास साड़ी के पल्लू में बंधा पांच रुपये का नोट था। ये पैसे गांव के महाजन से लिए गए थे जो उन्हें धान के रूप में लौटाने थे। जब उन्हें कटाई के बाद अपना हिस्सा मिलेगा तो उसमें से उन्हें न केवल कर्जा लौटाना होगा बल्कि इस कर्जे का ब्याज भी चुकाना होगा जो इस रकम का तकरीबन एक-तिहाई बैठेगा।

इससे पहले वह सिर्फ एक बार शहर गई थी। तब वह बहुत छोटी थी। वह गर्मियों में चितराई पर्व के मेले पर शहर गई थी। तब बैलगाड़ी में बैठकर वह अपने सारे परिवार वालों के साथ शहर गई थी। उसको याद भी नहीं पड़ता कि यह दस साल पहले की बात है या पंद्रह साल पहले की...।

सड़क पर गहरे गड्ढे बने हुए थे और जगह-जगह जाड़ों की बारिश का पानी जमा था। यह सड़क कभी पक्की बनाई गई थी लेकिन अब उस पर रोड़ी के सिर्फ निशान बचे हैं। अब ये भी बसों के पहियों में रुकावट बन जाते हैं। सड़क किनारे कहीं झाड़ियों की लंबी कतार थी तो कहीं चावल या गन्ने से लहलहाते हरे-भरे खेत थे। बस ड्राइवर को जब भी रास्ते में धान के खेतों की तरफ जाती हुई औरतों के झुंड दिखाई दिखाई देते तो वह जोर से हॉर्न बजाता। कुछ महिलाएं सड़क किनारे कतार में चली जा रही थीं, कुछ दोपहर के लिए सिर पर पतले दलिये के छोटे-छोटे बर्तन टिकाए हुए थीं। इक्का-दुक्का महिलाएं गर्भावस्था की वजह से बहुत धीमे चल रही थीं।

रक्कू को बाहर गुजरते इन दृश्यों में कोई दिलचस्पी नहीं थी। उसकी अधखुली आंखें अपनी गोद में लेटे बच्चे पर जमी हुई थीं। उसने बच्चे को साड़ी से ढंककर अपने स्तनों से लगाया हुआ था। पर बच्चा तो इतना कमजोर हो चुका था कि वह एक बार में बहुत कम दूध पी पाता था। अब उसकी देह एकदम बेजान और सूख चुकी था।

बस आखिरकार उस छोटे कस्बे में पहुंच गई जहां वे कल रात आए थे। यहां से उसे दूसरी बस लेनी है जो 20 किलोमीटर आगे उसे शहर पहुंचा देगी। उसने झिझकते हुए एक आदमी से पूछा कि शहर को जाने वाली बस कहां से मिलेगी। उस औरत के पति ने सड़क पर बनी चाय की दुकानों की तरफ इशारा किया। रक्कू वहां जाकर खड़ी हो गई जिस तरफ उस आदमी ने इशारा किया था और धूप में इंतजार करने लगी। तभी उसे सफेद सूती साड़ी पहने हुए एक औरत दिखाई दी। वह शहर से अभी-अभी आकर रुकी बस से उतर रही थी। औरत ने अपने बालों को बड़े करीने से जूड़े में बांधा हुआ था। उसकी कलफ लगी साड़ी में चुन्नटें बड़ी साफ थी। यह सरकारी साड़ी थी जिससे पता चलता था कि वह औरत ब्लॉक के ग्रामीण स्वास्थ्य केंद्र में काम करती है। वह एक ऑग्ज़ीलरी मिडवाइफ थी।

रक्कू ने उस औरत को साल भर पहले अपने गांव में भी देखा था। उस समय वह 7-8 महीने की गर्भवती थी। यह इत्तेफाक की बात थी कि रक्कू उस दिन घर पर ही थी। उस दिन जब वह जलावन के लिए लकड़ी काटने खेतों में गई थी तो थोड़ी देर बाद उसको खून बहने लगा था और वह जल्दी ही घर लौट आयी थी। जैसे ही घर की दहलीज पर पहुंची, उसे किसी की आवाज सुनाई दी। कोई उसे बाहर बुला रहा था। उसने पलटकर देखा तो यही सफेद साड़ी

वाली औरत खड़ी थी। इस औरत ने धूप से अपना चेहरा बचाने के लिए बड़ा सा काला छाता ले रखा था।

नर्स-मिडवाइफ ने रक्कू को बताया कि वह उसे एक इंजेक्शन लगाएगी जिससे उसका नवजात शिशु "सातवें दिन की बीमारी" से मरने से बच जाएगा। यहां नवजात शिशुओं में टिटेनस को इसी नाम से जाना जाता था। उसने रक्कू से यह भी पूछा था कि उसके कितने बच्चे हैं। जब रक्कू ने उसे बताया कि उसके तीन में से दो बच्चे जीवित हैं तो वह महिला परिवार नियोजन ऑपरेशन के बारे में बताने लगी। उसने रक्कू से पूछा कि वह तीन से ज्यादा बच्चों को खिलाने-पिलाने और पढ़ाने के लिए कहां से साधन जुटाएगी। रक्कू को ऐसी चीजों के बारे में बात करते हुए बड़ी झिझक हो रही थी। उसे यह देखकर हैरानी भी थी कि कोई औरत यह सोच सकती है कि एक परिवार में दो या तीन बच्चे ही काफी होते हैं। दुविधा और शर्म से वह वापस मुड़ गई और घर के भीतर चली गई। उसने इंजेक्शन नहीं लगवाया। रात को उसे यह सोच-सोचकर बड़ी हैरानी हो रही थी कि कोई शहराती औरतें ऐसी बातों के बारे में कैसे बात कर लेती हैं। उनको गांव की जिंदगी के बारे में कितना कम पता होता है! लेकिन उसने यह भी महसूस किया कि अगर किसी के पास निश्चित सरकारी आमदनी है तो वह किसी भी चीज के बारे में बात कर सकती है। उसने यह भी सुना था कि स्वास्थ्य केंद्र में कई बार कर्मचारी बस से पलायानूर गांव भी आते हैं। वहां उसके कई चचेरे भाई-बहन बताते थे कि वे "टीकाकरण" से कितने डरे रहते हैं। उनको लगता है कि वे सारे टीके "परिवार नियोजन" के इंजेक्शन होते हैं। ये स्वास्थ्य कर्मी आमतौर पर गरीब परिवारों की महिलाओं से नहीं मिलते थे क्योंकि वे देर से गांव में आते थे जबकि गांव की ज्यादातर औरतें उससे पहले ही काम के लिए जा चुकी होती थीं। वैसे भी, उसके गांव में ऐसे कर्मचारी ज्यादा नहीं आते थे क्योंकि यहां तक बस का रास्ता नहीं है और ज्यादातर कर्मचारी इतनी दूर तक पैदल चलने का झंझट नहीं लेते।

ये सारी बातें उसके जहन से गुजरती रहीं और सफेद साड़ी वाली औरत भीड़ भरी सड़क पार करके उसी बस में जा बैठी जिससे अभी रक्कू उतरी थी। रक्कू ने अपने बच्चे को एक बांह से दूसरी बांह पर पलटा और साड़ी से उसका चेहरा फिर ढंक दिया। पलायानूर वाली बस चल पड़ी तो अचानक रक्कू को इस औरत पर बहुत गुस्सा आने लगा। उसे हैरानी हुई कि एक स्वास्थ्यकर्मी होते हुए भी उसके पास बीमार बच्चों के इलाज के लिए दवाइयां क्यों नहीं हैं। उसके पास सिर्फ स्वस्थ बच्चों के लिए इंजेक्शन और मांओं को देने के लिए ये सलाह ही है क्यों है कि उन्हें और बच्चे पैदा नहीं करने चाहिएं! यहां उसका बच्चा मर रहा है और यह औरत उसकी कोई मदद नहीं कर सकती।

थोड़ी देर में शहर जाने वाली बस आ गई। बस लगभग पूरी भरी हुई थी। बस में घुसने के लिए भीड़ की धक्कामुक्की को देख कर उसका कलेजा कांप गया लेकिन कंडक्टर ने उसकी गोद में बच्चा देख कर उसे जैसे-तैसे एक सीट दिला दी।

अब सड़क किनारे जो कस्बे और गांव आ रहे थे वे ज्यादा बड़े थे और उसके लिए बिल्कुल अनजान थे। अचानक वह इस खयाल से कांप गई कि अगर गांव से दूर अजनबियों के बीच उसके बच्चे ने दम तोड़ दिया तो क्या होगा! सारे रास्ते वह अपनी जल्दबाजी के लिए खुद को कोसती रही और ये उम्मीद भी करती रही कि शायद बड़े अस्पताल के इलाज से उसका बच्चा बच जाएगा।

जब बस शहर के नजदीक पहुंची तो बस में भीड़ इतनी हो गई थी कि उसे बाहर का कुछ दिखाई भी नहीं पड़ पाता था। गाड़ियों के शोर और साइकिलों, बैलगाड़ियों, लोगों की भीड़ में से रास्ता बनाने के लिए धीमी चलती बस की वजह से उसे अंदाजा हो गया कि अब शहर आ चुका है। शोर बहुत तेज था। ट्रकों-बसों के इंजनों का शोर, उनके हॉर्न और सिनेमाघरों से आते लाउडस्पीकरों के कानफोडू संगीत ने उसको और परेशान कर दिया था। वह उस क्षण के बारे में सोचकर डरने लगी जब बस आखिर रुक जाएगी और उसे अकेले बस से उतरना पड़ेगा।

आखिरकार उसकी बस शहर के बीचोंबीच बने बस अड्डे पर आकर रुक गई। वह सारे मुसाफिरों के उतरने तक चुपचाप बैठी रही। वहां न जाने कितनी और बसें खड़ी थीं। कोई आ रही थी तो कोई जा रही थी। टिकटों और सीटों के लिए लोगों के झुंड लगे हुए थे। बस से उतरकर वह देहाती-से कपड़ों वाली कुछ औरतों के पीछे चल पड़ी। शायद उनको

ये पता था कि बस अड्डे से निकलने का रास्ता किधर है। लेकिन थोड़ी देर में औरतों का यह झुंड उसकी आंखों से ओझल हो गया। वह बेचैन होकर फूलों की एक दुकान के पास खड़ी हो गई। जैतून के फूलों से लदी एक मेज के पीछे एक लड़की छोटे-छोटे सफेद फूलों को माला में पिरो रही थी। रक्कू कुछ पल उसे देखती रही और फिर उसने हिचकिचाते हुए उस बच्ची से पूछा कि सरकारी अस्पताल का रास्ता किधर से जाता है। अपने काम की लय को तोड़े बिना लड़की ने ऊपर देखा। उसने बस अड्डे के बाहर एक चौराहे की तरफ इशारा किया और कहा कि अस्पताल शहर के दूसरी तरफ कई किलोमीटर दूर है। उसने रक्कू को कहा कि वह सड़क पार करके 3 नम्बर की बस ले ले।

रक्कू ने धीरे से सिर हिलाया, मुड़ी और सड़क की तरफ बढ़ गई। वहां बसों, ट्रकों और कारों की रेल-पेल थी। एक पुलिस वाला यातायात को नियंत्रित करने की कोशिश कर रहा था। लोगों की भीड़ इतनी भारी थी कि बीच-बीच में वे गाड़ियों को भी रोक देते थे ताकि सड़क पार कर सकें। उसे दूसरी तरफ कई बसें दिखाई दीं। वह धीरे-धीरे उन बसों तक पहुंच गई। वहां जाकर उसने देखा कि एक बस पर “3” नम्बर लिखा हुआ था। यह बस तो पहले ही पूरी तरह भर चुकी थी। अब उसे अगली बस का इंतजार करना था। जैसे ही अगली बस आई वह औरतों के एक झुंड के पीछे-पीछे बस में चढ़ गई। इस बार उसे सीट नहीं मिल पाई। रक्कू ने अपने पास खड़ी एक औरत से पूछा कि क्या यह बस बड़े अस्पताल जा रही है? औरत ने सिर हिलाकर हामी भरी। रक्कू ने फिर पूछा, “टिकट कितने का लगेगा?” बगल वाली औरत ने जवाब दिया, “तीस पैसे का, अम्मा”। रक्कू ने साड़ी से सिक्के निकाले और मुसाफिरों के बीच से जगह बनाते हुए आ रहे कंडक्टर को पकड़ा दिए। उस औरत ने रक्कू के बच्चे को संभालने के लिए हाथ बढ़ाया लेकिन रक्कू ने उसको मना कर दिया और कहा कि बच्चा बहुत बीमार है इसलिए उसे खुद ही बच्चे को संभालना है। औरत ने उसकी बात मान ली और कहा कि जब अस्पताल आएगा तो वह उसे बता देगी। उसने कहा कि वह भी अस्पताल के स्टॉप पर ही उतरेगी।

रक्कू को संतोष हुआ कि उसने लोकल बस ले ली थी क्योंकि अस्पताल तो वाकई बहुत दूर था। हर बार जब बस रुकती तो चढ़ती-उतरती सवारियां उसे बार-बार किनारे की तरफ ढकेल देतीं। आखिरकार बस ने एक आधा चक्कर काटा और एक मटमैली विशाल इमारत के सामने आकर रुक गई। ज्यादातर सवारियां यहीं उतर रही थीं। उसे भी लगा कि यही अस्पताल का स्टॉप होगा। बहुत सारे दूसरे लोगों के साथ वह भी बस से उतर गई। फल, दवाइयों के लिए खाली शीशियां आदि बेचती बहुत सारी दुकानों की कतार पार करते हुए वह भीड़ के पीछे-पीछे चलने लगी।

जब वह अस्पताल के सामने पहुंची तो उसने देखा कि अस्पताल का फाटक लोहे के बड़े-बड़े दरवाजों से बंद था। वहां थोड़ी-सी भीड़ जमा थी। ज्यादातर लोग उसी की तरह मैले-कुचैले कपड़ों में थे। भीड़ में ज्यादातर महिलाएं थीं। इस भीड़ को देखकर उसे थोड़ी हिम्मत हुई और उसने पास में खड़ी एक औरत से पूछा कि फाटक क्यों बंद है। औरत ने हैरानी से रक्कू की तरफ देखा, “तुम्हें मालूम नहीं है? यह फाटक तो हर रोज 9 बजे तक बंद हो जाता है। अगर तुम्हें इलाज कराना है तो तुम्हें 7 या 8 बजे तक पहुंच जाना चाहिए।” और उसने तरस खाते हुए मुंह बनाया, “च्च्च! अच्छा तुम गांव से आई हो!”

“लेकिन मैं अपने लिए नहीं आई हूं। मैं अपने बच्चे के इलाज के लिए आई हूं।” रक्कू ने जवाब दिया। औरत के चेहरे पर फिर से एक दया भरी मुस्कान फैल गई। वह बोली, “कोशिश करके देख लो। अगर किस्मत अच्छी हुई तो शायद वह तुम्हें अंदर जाने दे लेकिन इसके लिए तुम्हें उसको एक रुपया तो देना ही पड़ेगा।”

फाटक पर तैनात चौकीदार ने उसे अंदर तो जाने दिया लेकिन एक रुपये की कीमत पर। रक्कू के लिए यह लगभग पूरे दिन की दिहाड़ी के बराबर कीमत थी। उसके लिए बड़ी रकम थी। इतना पैसा चौकीदार को देने के बाद वह खुद को उसे बददुआ देने नहीं रोक पाई। बहरहाल, उसका दिमाग तो बच्चे पर ही लगा हुआ था। वह इस माहौल के अजनबीपन से आतंकित थी। अस्पताल के मुख्य दरवाजे के सामने जो मैदान था उसमें लोगों के झुंड जमे हुए थे। कुछ लोग अपने बीमार रिश्तेदारों के लिए बाहर से खाना लेकर आए थे। यहां भी कुछ सफेद साड़ी वाली औरतें थीं। रक्कू समझ गई कि ये नर्स होंगी। वह मुख्य दरवाजे से दो नर्सों के पीछे-पीछे चल पड़ी और उनका ध्यान खींचने की कोशिश करने लगी। उनमें से एक युवती ने मुड़कर उड़ती नजर से रक्कू की तरफ देखा लेकिन वह रुकी नहीं। अपनी सहेली

के साथ चलती रही। रक्कू हैरान-परेशान एक दीवार से लग कर खड़ी हो गई। एक बार फिर उसने बड़ी हिम्मत जुटाई और हॉल के दूसरी तरफ से आई सफेद साड़ी वाली एक और औरत की तरफ बढ़ गई।

“सिस्टर, मेरा बच्चा बीमार है। मेहरबानी करके बता दीजिए कि इसे कहां दिखाऊं?” उस औरत ने हैरानी से रक्कू को देखकर कहा, “आउटपेशेंट्स क्लीनिक तो बंद हो चुका है। तुम उसे जल्दी क्यों नहीं लायी? कल सुबह 7 बजे तक आ जाना।” और वह पलट कर अपने रास्ते चल पड़ी।

रक्कू ने हिम्मत नहीं हारी, “लेकिन मेरा बच्चा बहुत बीमार और कमजोर है।” नर्स बड़े व्यस्त अंदाज में बोली, “ठीक है, 114 नम्बर वार्ड में जाओ। उधर बाईं तरफ। शायद वहां कोई बच्चे को देख ले।” और कहकर वह तेजी से चली गई।

कहीं भूल न जाए यह सोचकर रक्कू ने दोहराया, “114”। वह हॉल के दूसरे छोर पर गई ओर बाईं तरफ मुड़ गई। यहां हॉल में दोनों तरफ रोगियों और रिश्तेदारों की कतारें लगी हुई थीं। कोई बीच में बैठा था तो कोई दीवार से सटकर। कुछ को पट्टियां बंधी थीं और ज्यादातर खामोश थे। उसे दरवाजों के ऊपर लिखे हुए अंक दिखाई दिए लेकिन वह उन्हें पूरी तरह नहीं पढ़ सकती थी। उसे पूछते हुए भी शर्म आ रही थी। फिर भी उसने पूछने की हिम्मत जुटा ली। कुछ लोगों को लगता था कि उन्हें सब कुछ पता है और उन्होंने उसे कई हॉल के पार जाने के लिए कहा। आखिरकार लगभग हताश मुद्रा में वह बच्चों के वार्ड में पहुंच गई। इस वार्ड में दाखिल होने के बाद उसमें थोड़ी हिम्मत आई और वह एक और नर्स की तरफ बढ़ गई। इस औरत ने हॉल के आखिरी सिरे पर एक कमरे की तरफ भेज दिया जिसका दरवाजा भी दिखाई नहीं दे रहा था। उसने कहा कि रक्कू वहां जाकर इंतजार करे। वहां थोड़ी देर में डॉक्टर उसे देखेंगे।

वार्ड लोगों से भरा हुआ था। माएं अपनी गोद में या कंधों पर बच्चों को लिए हुए थीं। कुछ महिलाएं हॉल की दीवार के साथ बैठी हुई अपने दुधमुंहे बच्चों को बोतल से पतला दूध पिला रही थीं। कई औरतें दीवार के साथ खड़ी थीं और जब भी कोई नर्स गुजरती तो उसको रास्ता देने की कोशिश करतीं। वह तीन बड़े-बड़े कमरों के सामने से गुजरी जिनके बाहर दोनों तरफ लोहे के पालने रखे हुए थे और कमरों के भीतर बिस्तरों के बीच में चटाइयां बिछी हुई थीं। हर चारपाई और बिस्तर पर कम से कम एक बच्चा अपनी मां या दादी-नानी के साथ लेटा हुआ था। इन बिस्तरों के बीच चलने भर को भी जगह नहीं थी। लगभग सारे बच्चे खामोश और स्थिर पड़े थे। ज्यादातर बेहद बीमार लग रहे थे। तीसरे कमरे में सिर्फ मेजें थीं जिन पर ज़ंग के रंग वाली रबड़ की शीट बिछी हुई थी। बच्चे इन मेजों पर कतारों में लेटे हुए थे। हर बच्चे की बांह या टांग पर कहीं न कहीं पट्टी बंधी हुई थी। हर बच्चे के ऊपर पानी की एक बोतल थी जिसमें से एक साफ नली उसके हाथ या पैर में बंधी पट्टी में जाकर गुम हो जाती थी। उसे वहां बड़ी तीखी बदबू आई। यह बदबू कुछ ज्यादा ही तीखी थी। इस तीखी गंध ने उसे गांव के कुंए में से निकलने वाली उस गंध की याद दिला दी जो तब आने लगी थी जब एक सरकारी कर्मचारी ने कुंए में कुछ सफेद पाऊडर डाल दिया था। एक नर्स उससे लगभग रगड़ते हुए कमरे में दाखिल हुई और तभी पीछे मुड़कर उसे रास्ता रोकने के लिए घुड़क दिया। रक्कू फिर आगे बड़ी और उस कमरे के भीतर जाकर खड़ी हो गई थी जिसकी तरफ पहली वाली नर्स ने इशारा किया था। थोड़ी देर बाद एक और औरत उसके पास आकर खड़ी हो गई। इस औरत की गोद में उसके बेटे से कुछ ज्यादा उम्र का बच्चा था। बिना खिड़कियों वाले इस कमरे में दोनों औरतें चुपचाप खड़ी इंतजार करने लगीं। हॉल में आदमी-औरतों के झुंड आते-जाते रहे। हॉल में गुजरने वाले सफेद जैकेट पहने हुए थे और उनकी जेब में या गले में स्टैथेस्कोप लटका हुआ था। उनके आगे-पीछे कुछ महिलाएं भी थीं जिनमें से कुछ काफी कम उम्र की थीं। उन्होंने मोटे नर्म सिल्क या बारीक सिंथेटिक कपड़े की साड़ियां पहनी हुई थीं। उन्होंने अपने खूबसूरत चमकते बालों को पीछे चोटियों में बांधा हुआ था। वहां से गुजरते हुए वे हंसी-मजाक करती और खिलखिलाती हुई वहां से गुजर जातीं। अगर उनके साथ कोई ज्यादा उम्र का डॉक्टर होता तो वे चुप रहतीं।

...अभी सिर्फ आधा घंटा हुआ था लेकिन ये इंतजार भी रक्कू को बहुत लंबा महसूस हो रहा था। इसी बीच सफेद जैकेट पहने एक युवक वहां आया। वह कोने में रखी छोटी मेज के पास कुर्सी पर बैठ गया और उसने इशारा करके

रक्कू को बुलाया। रक्कू उसके पास जाकर बच्चे को दिखाने लगी जो उसकी बांहों में बेहोश पड़ा था। युवक ने बिना कुछ कहे बच्चे के होंठों को देखा और उसके पेट पर कई बार चुटकियां भरीं। बच्चा थोड़ा कसमसाया। उसने जल्दी से स्टैथेस्कोप लगाकर बच्चे के पेट और छाती की आवाजें सुनीं। उसने रक्कू की तरफ देखे बिना पूछा कि क्या बच्चे के दस्त में खून या मोटे कीड़े निकले थे? उसे कब से दस्त हो रहे हैं? जब रक्कू ने उसके आखिरी सवाल का जवाब दिया तो युवक ने कुछ हैरानी से कहा, "तीन दिन तक तुम इंतजार कर रही थी..................... बच्चे की खाल सूख गई है।

रक्कू कुछ नहीं बोली। उसके पास जवाब था तो उसकी गरीबी और यह भला किसी को क्या समझाती? भला वह कैसे डॉक्टर को समझाती कि एक दिन की मजदूरी छोड़ने का उसके परिवार के लिए क्या मतलब है? भला वह उसे क्या समझाती कि यहां तक आने के लिए उसने जो कर्जा लिया है उसको भी चुकाने के लिए उसे अपने थोड़े से अनाज में से हिस्सा देना होगा जिसमें उसका दो-वक्त का गुजारा भी नहीं चल पाता? और सबसे बढ़कर, वह यह कैसे समझाती कि उसके लिए और उसके परिवार के लिए यह बच्चा कितना महत्वपूर्ण है? डॉक्टर ने ये कहा तो नहीं लेकिन उसकी बात का मतलब यही था कि रक्कू ने बच्चे की सही ढंग से देखभाल नहीं की है। रक्कू यह सोचकर बहुत बुरी तरह आहत हो गई लेकिन उसने सिर झुकाया और चुप खड़ी रही।

युवा डॉक्टर मेज के पीछे से उठा और उसने रक्कू को अपने पीछे आने का इशारा किया। वह रक्कू को तीसरे वाले कमरे में ले गया और वहां से वह फिर गायब हो गया। दस मिनट बाद वह एक नर्स के साथ लौटा। रक्कू ने उन दोनों के कहे मुताबिक बच्चे को मेज के किनारे पर लिटा दिया। दूसरे बच्चों की तरह उन्होंने रक्कू के बेटे की टांग में भी एक सुई लगाई और उसकी नली ऊपर लटकी "ग्लूकोज वॉटर" की बोतल से जोड़ दी। कमरे में मौजूद दूसरी मांओं की तरह वह भी सुई को सीधा रखने के लिए उसकी टांग को पकड़ कर खड़ी हो गई और पानी धीरे-धीरे बच्चे के निर्बल शरीर में बूंद-बूंद जिंदगी डालने लगा।

इसी तरह कई घंटे गुजर गए। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि इलाज कब तक चलेगा। उसने अपने पति से वादा किया था कि वह शाम की बस से लौट आएगी। नर्स दोपहर बाद भी कई बार बच्चे की सुई चेक करने आई और उसने हर बार पूछा कि क्या उसके बच्चे को अभी भी दस्त हो रहे हैं। उसने यह भी पूछा कि बच्चा पेशाब करने लगा है या नहीं। रक्कू के बेटे के लिए पानी की दूसरी बोतल लगा दी गई। शाम होते-होते उसे यह अंदाजा हो गया था कि अब वह गांव की आखिरी बस पकड़ने के लिए कस्बे तक नहीं पहुंच पाएगा। करूपाया यह देखकर बहुत गुस्सा भी होगा और उसे शर्म भी आएगी कि उसकी बीबी शहर में अकेली है। वह अपने परिवार व पति के प्रति दायित्व और अपने इस बच्चे के प्रेम के बीच झूलने लगी। दूसरे बच्चों की तरफ देखते हुए वह समझ सकती थी कि वे ग्लूकोज वाटर से धीरे-धीरे ताकतवर हो रहे हैं। उसकी बड़ी गहरी आशा थी कि उसके बच्चे को भी ऐसी ही ताकत मिल जाएगी। भय और दुविधा में जैसे-तैसे उसने वहां रुकने का फैसला ले लिया। उसे यकीन भी नहीं हो रहा था कि उसने यह फैसला ले लिया है। शायद यह पहला मौका था जब उसने खुद अपने बूते पर ऐसा कोई बड़ा फैसला लिया था।

शाम तक बच्चे की देह में कुछ ताकत लौटने लगी थी। दस्त रुक गए थे। देर रात गए नर्स ने बच्चे की टांग से सुई निकाल दी। नर्स ने रक्कू को कहा कि उसे सुबह तक इंतजार करना होगा और अगर सुबह तक दस्त नहीं हुआ तो उसे वापस घर भेज दिया जाएगा। रक्कू ने बेचैनी से पूछा, "अगर दस्त दोबारा शुरू हो गए तो? क्या आप कोई गोली या इंजेक्शन नहीं लगा सकतीं?" तब तक नर्स जा चुकी थी...।

अगले दिन सुबह ही बच्चे को छुट्टी दे दी गई। एक और युवा डॉक्टर ने बच्चे की जांच कर ली थी। रक्कू बताने ही वाली थी कि रात को दोबारा हल्के से दस्त हुए थे लेकिन नर्स ने डॉक्टर को कह दिया कि बच्चे को कोई दस्त नहीं हुआ है। डॉक्टर और नर्स के हाव-भाव से यही लग रहा था कि यह कोई गंभीर स्थिति नहीं है। डॉक्टर ने कहा, "वैसे भी अम्मा मॉर्निंग क्लीनिक से थोड़ी देर में बच्चों का नया झुंड आ जाएगा और उनको भी ग्लूकोज पानी की जरूरत होगी।" ऐसा कह कर वे अगली टेबल की तरफ बढ़ गए।

अब बच्चे की हालत निश्चित रूप से बेहतर थी। अब उसमें दूध चूसने और रोने की ताकत लौट आई थी। रक्कू ने उसे कपड़े में लपेट लिया था जो अभी भी गीला था। वह अस्पताल के लंबे गलियारे में से बाहर की तरफ चल पड़ी। बाहर सड़क पर आते ही उसे अपनी भूख का अहसास हुआ और उसे याद आया कि उसने दो शाम पहले से कुछ नहीं खाया है। अगर वह शहर की लोकल बस लेने की बजाय बस अड्डे तक पैदल चली जाए तो वह चावल की एक बाटी खरीद सकती है। अकेले किसी खाने की दुकान में जाने और फिर बस अड्डे का रास्ता पूछने में उसे उतनी ही शर्म आ रही थी जितना उसे अपने खाली पेट का दर्द परेशान कर रहा था। जब वह शहर की संकरी भीड़ भरी सड़कों से गुजर रही थी तो लॉरियां और चमचमाती हुए कारें ऐसी तेज रफ्तार से उसकी बगल से गुजर जातीं कि वह बार-बार धूल और धुंए के बादलों में अंट जाती।

जिस तरह वह कल शहर आने के दौरान डरी हुई थी उसी तरह अब गांव लौटने का सफर भी हताशाओं से भरा रहा। बच्चे को दोबारा दस्त शुरू हो गए थे। ये पानीदार दस्त ऐसे कुपोषित बच्चों में बहुत आम हो जाते हैं जिनका शरीर और पेट इतना कमजोर होता है कि जरा से खाने को भी नहीं पचा पाता। यह कुपोषण से पैदा होने वाली क्रॉनिक यानी दीर्घकालिक पेचिश थी। रक्कू को यह बात समझ में नहीं आई। कम से कम मुक्कमल तौर पर तो उसे इस बात का कोई अंदाजा नहीं था। अब उसको यह बात सच लगने लगी थी कि उसके बच्चे पर किसी बुरी आत्मा का साया है। यह धारणा उसके गांव में बहुत सारे घरों में देखी जा सकती थी। लेकिन उसे यह भी पता था कि उसके बेटे की बांह और जांघें इसलिए इतनी पतली हैं क्योंकि वह कभी भी उसे पूरे दिन दूध नहीं पिला पाई और न ही कोई और खुराक दे पाई। बच्चा पैदा होने के मुश्किल से एक महीने बाद ही उसे खेत में काम के लिए लौटना पड़ा था। उसको ये सारी बातें रह-रहकर याद आ रही थीं। उन्हें याद करके उसका कलेजा जल जाता था। लेकिन उसके पास किसी और स्थिति की कल्पना भी नहीं थी। हर गरीब मां के सामने यही समस्याएं रहती हैं। क्या इसी कारण उसकी समस्या अपरिहार्य और लिहाजा स्वीकार्य नहीं बन गई थी?

जब वह गांव जाने वाली बस से उतरी और अपने घर की तरफ पैदल चली तो सूरज एकदम सिर पर आ गया था। खुले खेतों के पार पहुंच कर उसे अहसास हुआ है कि पिछली तीन रात से न सो पाने से उसमें कितनी कमजोरी आ गई है। बच्चे की जान पर दोबारा मंडरा रहे खतरे से वह और बेचैन हो गई। इसी शारीरिक और भावनात्मक थकान ने उस शाम को उसे पति की डांट-फटकार के सामने निरूत्तर कर दिया था। रक्कू अभी भी घर में दाखिल भी नहीं हुई थी कि मीना बच्चे को देखने और उसकी लंबी कहानी सुनने को आ पहुंची थी। दायी ने बच्चे की पट्टी बंधी टांग को देखा जहां सुईं लगाई गई थी और उसके सूखे होंठो को देखा। अंत में उसने नजरें ऊपर उठाईं और कहा, “चलो सुबह तक देखते हैं।” फिर वह रुक कर बोली, “सुबह तक देखते हैं क्या होता है।”

जब मीना जाने लगी तो पल भर को एक अजीब सन्नाटा छा गया। इसके बाद वह जल्दी से बाहर निकल गई और रक्कू अकेली रह गई। उसे रागी पीसनी थी। जब उसका काम खत्म हो गया और आग पर दलिया उबलने लगा तो रक्कू मिट्टी की दीवार से पीठ लगाकर बैठ गई। उसकी आंखों में कोई चमक नहीं थी। शाम के गहराते धुंधलते में वह अपनी गोद में लेटे बच्चे को देखे जा रही थी। जब भी वह बच्चे के चेहरे को देखती, पास ही कहीं घात में बैठती मौत का खयाल उसके दिल को दहला देता। उसकी सोच पर ऐसे ही डरावने खयालों ने पूरी तरह कब्जा कर लिया था। जब उसका पति घर लौटा तो डांट-फटकार स्वाभाविक थी। लेकिन उसकी फटकार जितना इस बात के लिए थी कि उसकी पत्नी ने उसका कहना नहीं माना उतना ही वह अपनी पत्नी की हताशा और अपनी लाचारी से भी परेशान था। रक्कू ने उसे खाना परोसा और फिर बच्चों को भी खाना दिया।

उस रात को जब उसका पति और बच्चे छप्पर में सो रहे थे तो रक्कू चुपचाप पीछे अहाते में बैठी अपने दम तोड़ते बच्चे के सूखकर कांटा हो चुके शरीर को थपथपा रही थी। सुबह तक बच्चे में कोई जान नहीं बची थी। फिर भी वह बच्चे को थपथपाती रही, उसने बच्चे को और सख्ती से अपने सीने से सटा लिया और नर्म आवाज में एक विलाप गीत गाने लगी।

थोड़ी देर में पति भी जाग गया। वह भी पूरी तरह सोया ही कहां था। धीमे-धीमे विलाप ने उसको एक पल के लिए

सकते में डाल दिया हालांकि पूरी रात मानो वह भी इस घड़ी का इंतजार ही कर रहा था। वह उठा और धीरे-धीरे अपने समुदाय के पुजारी के घर की तरफ चल पड़ा। दिन चढ़ते-चढ़ते बच्चे को दफनाया दिया गया था। कुरूपाया को जबरन बच्चे का नन्हा निर्जीव शरीर अपनी पत्नी के हाथों से छीनना पड़ा। यह एक बच्चे की मौत थी इसलिए उन्होंने वे सब संस्कार नहीं किए जो किसी वयस्क की मौत पर किए जाते हैं। फिर भी, उनकी मिट्टी की छोटी-सी झोंपड़ी हफ्तों तक उनके विलाप और शोक से भरी रही।

वे पहले की तरह फिर कटाई में लग गए लेकिन अब रक्कू बिल्कुल मशीन की तरह काम करने लगी थी। उसकी लय बाकी औरतों से अलग रहती थी। उन औरतों को भी पता था क्योंकि उन सबने कभी-न-कभी इस तरह मौत के हाथों अपने बच्चे को छिनते देखा था। वे सब उसकी लाचारी और पीड़ाओं को समझती थीं। और उन सारी भावनाओं को समेटते हुए वे इन झुलसते खेतों में अनाज के गट्ठर बनाती जाती थीं हालांकि इसमें उनका हिस्सा बहुत मामूली था।

गुस्से और हताशा ने सवाल रक्कू के जहन में जो सवाल उठाए थे वे आखिरकार रोज-रोज की जद्दोजहद से उसकी बांहों और पीठ में होने वाले बेहिसाब दर्द के सामने कमजोर पड़ जाएंगे। बल्कि शायद उनको भुला दिया जाएगा... जब तक एक और बच्चे की मौत का हादसा नहीं होता।

बहरहाल, इन सारी कोशिशों में एक ज्यादा गहरा विश्लेषण गायब है। *गांव वालों की नजर से* यह सवाल उठना लाजिमी है कि मौजूदा तंत्र लगातार उनकी पहुंच के बाहर क्यों रहता है। ऐसे रवैये, जिनको मिथक या विचारधारा कहा जा सकता है, अभी भी सरकारी सोच पर हावी हैं। स्वास्थ्य सेवाओं के सीमित सदुपयोग के लिए दी जानी वाली सतही व्याख्याएं - मसलन गरीबों की अज्ञानता और अड़ियलपन, या बीमारियों के बारे में उनकी दकियानूसी मान्यताओं का तर्क। यहां तक कि पश्चिमी अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियां और कांउसिलें भी इस मान्यता को खूब बढ़ावा देती हैं कि तीसरी दुनिया के समुदाय इसीलिए गरीब व बीमार रहते हैं क्योंकि वे सदा बच्चे पैदा करने में ही लगे रहते हैं।

ये गौर करने की बात है कि योजनाकार इस नाकामयाबी के कारणों पर गांव के गरीब लोगों के हालात और उनकी नजर से सोचने की कोशिश नहीं करते। इसका कारण शायद यह है कि या तो राजनीतिक पदाधिकारियों के रूप में या अंतर्राष्ट्रीय कंसल्टेंट्स की हैसियत से योजनाकारों की अल्पकालिक हैसियत उन्हें पिछली योजनाओं के नतीजों और चुनौतियों के बारे में जरूरी समझ विकसित करने और महत्वपूर्ण सवाल उठाने की छूट नहीं देती। बहुत सारे सलाहाकारों और योजनाकारों के लिए तो मौजूदा सामाजिक व्यवस्था या एजेंसियों में उनकी हैसियत ही उन्हें गहरे संरचनात्मक सवालों की पड़ताल करने से रोक देती है।

अध्ययन का यह दूसरा भाग रक्कू की नजर से उन रुकावटों को बेपर्द करने की कोशिश करता है जिन्होंने उसे अपने बच्चे की जिंदगी बचाने का मौका नहीं दिया। उसके ग्राम्य जीवन के आर्थिक और सामाजिक हालात की समझदारी से एक ऐसी व्याख्या सामने आती है जो अधिकृत व्याख्याओं और मान्यताओं से काफी भिन्न है। इस ग्रामीण समझदारी के अनुसार चलते हुए हम एक खेत मजदूर के रूप में रक्कू के दैनिक जीवन पर और नजदीक से ध्यान देंगे और इसकी गरीबी से उसके परिवार के स्वास्थ और स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ उठाने की सामर्थ्य को देखेंगे। आगे के अध्यायों में विश्लेषण को और विस्तार दिया गया है ताकि ग्रामीण बहुसंख्या की स्वास्थ्य संबंधी प्राथमिकताओं को समझा जा सके और यह जाना जा सके कि इन जरूरतों को पूरा करने के लिए स्वास्थ्य व्यवस्था कितनी सक्षम है। हम यह भी देखेंगे कि स्वास्थ्य सेवाओं की संरचना किस तरह ग्रामीण लोगों के लिए पहुंच की समस्या पैदा कर देती है।

अध्ययन के इस हिस्से में रक्कू के संघर्ष को भूख के खिलाफ गरीबों के दैनिक संघर्ष के संदर्भ में रखकर देखने का प्रयास किया गया है।